International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
An International Quarterly bi-lingual Multidisciplinary Double Blind Open Access Peer Reviewed Refereed Journal
ISSN :2581-9925, Impact Factor (Cosmos: 7.555 & I2OR: 5.105), Volume 08, No. 02(II), April- June, 2026, pp. 122-128

भारत में स्वराज्य की धारणाः पूर्व गाँधीय प्रस्थापनाएँ नौरोजी, रानाडे, गोखले एवं तिलक

डॉ. दीपिका चौधरी*

राजनीति विज्ञान, अतिथि सहायक आचार्य, राजकीय कन्या महाविद्यालय, कामाँ (डीग) भरतपुर, राजस्थान।

*Corresponding Author: deepikachaudharybtp@gmail.com

Citation: चौधरी, दीपिका (2026). भारत में स्वराज्य की धारणाः पूर्व गाँधीय प्रस्थापनाएँ नौरोजी, रानाडे, गोखले एवं तिलक. International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science, 08(02(II)), 122–128. https://doi.org/10.62823/IJEMMASSS/8.2(II).9048

सार

भारत के आर्थिक शोषण की यह अद्‌भुत कहानी है अंग्रेजों की सारी व्यापारिक, औद्योगिक, विनिमय दर तथा यातायात जाति यही रही कि भारत की आर्थिक संरचना का उपयोग इंग्लैंड के औद्योगिक एवं व्यापारिक विकास के लिए किया जाये। दादामाई नौरोजी ने भारत की निर्धनता के लिए अन्य विचारकों द्वारा प्रस्तुत किये गये तर्कों के जिसमें जनसंख्या को दोषी ठहराया तथा अमान्य सिद्ध किया। अपने तर्क से उन्होंने यह तर्क प्रस्तुत किया कि भारत की निर्धनता के लिए भारत की जनसंख्या अथवा दोषपूर्ण आर्थिक नियमों को उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता। इसके लिए उन्होंने अंग्रेजों की क्रुर आर्थिक शोषण की नीति को उत्तरदायी ठहराया।

शब्दकोशः *गाँधीय प्रस्थापनाएँ, आर्थिक शोषण, विनिमय दर, आर्थिक संरचना, औद्योगिक विकास।*

प्रस्तावना

आर्थिक राष्ट्रवाद नौरोजी

प्राचीन काल में भारत धर्मगुरू होने के साथ–साथ भौतिक दृष्टि से भी सम्पन्न देश था। अन्न, वस्त्र तथा जीवन की अन्य अनिवार्य आवयश्कताओं की पूर्ति के भारत में पर्याप्त साधन उपलब्ध थे। भारत को सोने की चिडिया कहा जाता था। भारत की इस सम्पन्नता की ओर विदेशियों का ध्यान आर्कषित हुआ। परिणामस्वरूप यूनानी शक, हूण, भंगोल, तुर्क, मुगल आदि अनेक जातियों ने भारत पर आक्रमण किये।

लेकिन भारत में अंग्रेजों के आगमन से यह स्थिति बदल गई। ब्रिटेन भारत की अर्थव्यवस्था से लाभावन्वित होने लगा। भारत की कृषि व्यवस्था नष्ट कर दी गई। उद्योग धन्धे क्षत–विक्षत कर दिये गये। भारत के विदेशी व्यापार को एक ऐसा मोड दिया गया जिससे भारत के परम्परागत व्यवसायिक कार्य समाप्त होने लगे। लखनऊ की छींट अहमदाबाद की धोंतियाँ, पालमपुर, मदुर, मद्रास आदि के बढिया वस्त्रों के उद्योग ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने उन्हें बुरी तरह नष्ट कर दिया उनकी ख्याति लुप्त हो गई।

1906 में कांग्रेस के कलकता अधिवेशन की अध्यक्षता करते हुए उन्होंने घोषणा की कि भारत के राजनीतिक प्रयत्नों का उद्‌देश्य स्वराज्य है यद्यपि उनके विचारों में स्वराज्य औपनिवेशक स्वराज्य था। स्वराज्य की रूपरेखा की घोषणा पश्चात प्रत्येक उदारवादी में इसे एक राष्ट्रीय आदर्श के रूप में स्वीकार किया।

* *Copyright © 2026 by Author's and Licensed by Inspira. This is an open access article distributed under the Creative Commons Attribution License which permits unrestricted use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work properly cited.*

महादेव गोविन्द रानाडे

इन्होंने भारत की दुर्दशा पर ''एसेज इन इण्डियन इकोनोमिक्स'' पुस्तक लिखी। रानाडे विदेशियों को भारत में अपनी पूँजी लगाने के लिए प्रेरित करने के पक्ष में थे। उनका विचार था कि देश के औद्योगिकरण के लिए देशी एवं विदेशी दोनों ही प्रकार की पूँजी को प्रोत्साहन दिया जाये। उन्होंने इस बात का समर्थन किया कि विदेशी आकर देश में बसे और लोग बाहर जाकर अपने उपनिवेश बसाये।

रानाडे ने भारत की दरिद्रता के लिए मुख्य रूप से निम्नलिखित छः कारणों को उत्तरदायी मानते थे–

- भारत की कृषि पर अत्यधिक निर्भरता और भारत की कृषि की प्रकृति पर निर्भरता के कारण।
- आधारभूत उद्योंगों की स्थापना के लिए पूँजी का अभाव।
- ऋण की पुरानी व्यवस्था।
- कुछ क्षेत्रों में जनसंख्या की सघनता।
- साहस की प्रवृत्ति तथा जोखिम उठाने की भावना से युक्त कार्यशील व्यक्तियों का अभाव।
- परम्परागत सामाजिक व्यवस्था तथा गतिशील अर्थतंत्र की माँग इन दोनों के बीच सामंजस्य का अभाव। रानाडे का विचार था कि उद्योग, व्यापार एवं कृषि तीनों का एक साथ विकास किये जाने पर ही देश का आर्थिक कल्याण हो सकेगा।

रानाडे में इतनी दूर दृष्टि थी कि उन्होंने भली–भाँति समझ लिया था कि यदि देश का औद्योगिकरण नहीं हुआ तो इसे विनाशकारी प्रतिस्पर्धा के जगत में उसका जीवित रहना असम्भ हो जायेगा।

इस प्रकार महोदव रानाडे भारतीय आर्थिक चिन्तन के क्षेत्र में प्रथम अर्थशास्त्री थे जिन्होंने भारत की आर्थिक प्रगति का मार्ग प्रशस्त किया। इस आर्थिक प्रगति के रानाडे ने भावी नीतियों का समुचित प्रस्ताव प्रस्तुत किया। उनके द्वारा भारतीय आर्थिक जीवन का वर्गीकृत विवरण भावी अर्थशास्त्रियों का मार्गदर्शक बना। नये उद्योंगों के परिवर्तन के संबंध में उनके विचार बहुत ही महत्वपूर्ण सिद्ध हुए हैं, वर्तमाान गणतंत्रीय सरकार के विचार भी लगभग वैसे ही हैं।

स्वराज्य प्राप्ति में उदारवाद का स्वरूप

1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना के पश्चात भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन उदारवादी, उग्रवादी व क्रान्तिकारी विचारों वाले नेताओं द्वारा संचालित हुआ। तीनों का उद्‌देश्य एक ही स्वराज्य की प्राप्ति परन्तु तीनों के साधन विचार इतने भिन्न थे कि वे आगे अलग–अलग विचार धारायें बन गयीं। राष्ट्रीय प्रयोजन की दृष्टि से उदारवादियों का लक्ष्य था। ब्रिटिश शासन के अन्तर्गत स्वशासन की प्राप्ति। उदारवादी नेताओं में प्रमुख थे दादाभाई नौरोजी, गोपाल कृष्णा गोखले सुरेन्द्र नाथ बनर्जी इत्यादि।

स्वशासन के अर्थ को स्पष्ट करते हुए गोखले ने कहा कि ब्रिटिश अभिकरण के स्थान पर भारतीय अभिकरण को प्रतिष्ठित करना, विधान परिषदों का विस्तार करना, उनमें सुधार करते–करते उन्हें वास्तविक निकाय बना देना और जनता को सामान्यतः अपने मामलों का प्रबंध स्वयं करने देना। भारत विश्व कि महान राष्ट्रों में राजनीतिक औद्योगिक, आर्थिक, साहित्य, विज्ञान और कला के क्षेत्र में अपना उपर्युक्त स्थान ग्रहण करें। ये सभी आदर्श साम्राज्य के अन्तर्गत ही प्राप्त हों।

उदारवादियों के प्रमुख सैद्धांतिक वैचारिक आधारों को संक्षेप में निम्न प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है–

- उदारवाद का लक्ष्य स्वशासन की प्राप्ति।
- ब्रिटिश शासन को ईश्वरीय वरदान मानते हुए उसके कल्याणकारी स्वरूप में विश्वास रखना।
- आर्थिक, राजनीतिक आधार पर प्रशासन में सुधार के पक्षधर
- केन्द्रीयकरण का विरोध एवं विकेन्द्रीकरण का समर्थन

- आर्थिक राष्ट्रवाद के प्रणेता
- समाज के पुनर्निर्माण पर बल
- लक्ष्य प्राप्ति हेतु संवैधानिक साधनों में विश्वास आदि।

उदारवादियों की मान्यता थी कि स्वशासन के आदर्श को ब्रिटिश शासन के कल्याणकारी स्वरूप में विश्वास रखते हुए ही प्राप्त किया जा सकता है। उनका विचार था कि ब्रिटेन से संपर्क बनाये रखने से होगा और भावी भारत के निर्माण का मार्ग प्रशस्त होना इसलिए उन्होंने ब्रिटिश संपर्क को भारत के लिए एक देवीय वरदान माना जिसके अन्तर्गत ही भारतीयों को अपनी प्रगति के लिए आवश्यक परिस्थितियाँ प्राप्त हो सकती थी। ब्रिटिश जनतांत्रिक संस्थाओं तथा शिक्षा पद्धति में गहरी आस्था रखने वाले गोपाल कृष्ण, गोखले, रानाडे की भाँति भारत में अंग्रेजी साम्राज्य की स्थापना भारत के भावी कल्याण के लिए स्वीकार करते थे। ब्रिटिश ताज के अतिरिक्त अन्य किसी नियंत्रणकारी सत्ता के अधीन उसका परीक्षण नहीं किया जा सकता।

गोखले ने ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत स्वशासन प्राप्त करने के लिए 1905 में ''सर्वेन्ट ऑफ इण्डिया सोसायटी'' की स्थापना की। इस सोसायटी की स्थापना का उद्देश्य भारत और ईश्वर के वरदान के रूप में स्वीकारना और ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत स्वशासन प्राप्त करना था। वे भारत के राजनीतिक तथा सार्वजनिक जीवन में ऐसे कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित करना चाहते थे जो धर्मनिष्ठा होकर जनसेवा का कार्य कर सके। वे सदस्यों को स्वार्थ रहित प्रेम और सद्भावना का वातावरण बनाने की प्रेरणा देते थे।

उदारवादी ब्रिटेन से संबंध विच्छेद नहीं करना चाहते थे। उदारवादी ब्रिटेन से निरन्तर संबंध बनाये रचाना चाहते थे। वे उन लाभों के लिए अंग्रेजी के ऋणी थे जो वे अपने साथ भारत लाये थे। नौरोजी ने ब्रिटिश शासन को वरदान मानते हुए 1886 के कांग्रेस अधिवेशन में ब्रिटिश शासन के प्रति पूर्ण युक्ति की घोषणा की। 1893 के लाहौर कांग्रेस के 9 वें अधिवेशन के अवसर पर उन्होंने कहा हमारी इच्छा है कि ब्रिटेन के साथ हमारा संबंध भविष्य में दीर्घकाल तक कायम रहे जिससे कि विश्व कि राष्ट्रों के बीच हमारा देश भौतिक तथा राजनीतिक दृष्टि से उच्च स्थान प्राप्त कर सके।

अपने जीवन के अंतिम दिनों में गोखले ने लार्ड विलिंगटन के आग्रह और फिरोजशाह मेहता के परामर्श से भारत में संवैधानिक और प्रशासनिक सुधारों की एक रूपरेखा प्रस्तुत की। भारत में सुधारों के संबंध में गोखले के अंतिम प्रस्ताव थे इसीलिए उन्हें गोखले का ''राजनीतिक वसीयतनामा'' कहा जाता है। 1915 में प्रस्तुत की गई सुधार योजना में गोखले ने जो प्रस्ताव किये वे उनके अंतिम लक्ष्य को व्यक्त नहीं करते थे अपितु वो तो क्रमिक सुधारों में विश्वास के उनके दृष्टिकोण के अनुरूप सुधारों की दिशा में आगे का एक और कदम थे। अतः उन्हें गोखले का राजनीतिक वसीयत नामा नाम देना न्याय संगत नहीं है।

गोखले द्वारा इस सुधार योजनायें सम्मिलित किये गये प्रस्ताव निम्नलिखित थे –

- प्रत्येक प्रान्त के प्रान्तीय प्रशासन के अध्यक्ष के रूप में इंग्लैंड से एक गर्वनर की नियुक्ति की जानी चाहिए।
- प्रत्येक प्रान्त में एक 6 सदस्य वाली कार्यकारी परिषद होनी चाहिए जिसमें कम से कम तीन भारतीय सदस्य हों।
- प्रान्तों में प्रभावशाली विधायी परिषदें स्थापित होना चाहिए तथा इन परिषदों में कम से कम 80 प्रतिशत सदस्य निर्वाचित क्षेत्रों और हित समूहों से निर्वाचित होना चाहिए।
- प्रान्तीस कार्यकारी परिषद को सभी मामलों में प्रान्तीय विधायी परिषद के प्रति जबावदेही बनाया जाना चाहिए और वित्तीय प्रस्तावों और बजट पर प्रान्तीय विधायिका का स्पष्ट अनुमोदन आवश्यक बना दिया जाना चाहिए।

- प्रान्तों की स्वायत्ता प्रदान की जानी चाहिए और आंतरिक और वित्तीय मामलों मे ंतो केन्द्रीय सरकार के नियंत्रण से यथासंभव युक्त रखा जाना चाहिए।
- प्रान्तीय प्रशासन को भी व्यापक रूप से विकेन्द्रीकृत किया जाना चाहिए।
- केन्द्रीय सरकार के स्तर पर वायसराय की कार्यकारी परिषद के विद्यमान स्वरूप में परिवर्तन कर उनमें 6 सदस्य सम्मिलित किये जाने चाहिए जिनमें से कम से कम दो भारतीय हों।
- इम्पीरियल लेंजिसलेटिव काउंसिल का मान बदलकर उसे भारत की विधानसभा का नाम दिया जाना चाहिए और उसका विस्तार किया जाना चाहिए।
- सेना में भारतीयों को कमीशन प्राप्त करने के व्यापक अवसर प्रदान किये जाने चाहिए।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि गोखले केन्द्रीय और प्रान्तीय प्रशासन में सुधारों के द्वारा प्रशासन में भारतीयों की भागीदारी को बढाकर स्वशासन के लक्ष्य की ओर एक और कदम बढाना चाहते थे। यह उनकी राजनीतिक यर्थाथवादिता और दूरदृष्टि का ही परिणाम था। उन्होंने नगरीय व ग्रामीण दोनों ही प्रकार की स्थानीय संस्थाओं को स्थापित करने और उन्हें सुदृढ आधार प्रदान करने पर बल दिया ताकि जनता को राजनीतिक प्रशिक्षण प्राप्त हो सके और वह इन संस्थाओं द्वारा चलाई जाने वाली विकास योजनाओं में सक्रिय भागीदारी निभा सकें। स्थानीय स्वायत्त शासन की संस्थाओं को सुदृढता प्रदान कर लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण का जो लक्ष्य गोखले ने 1915 में निर्धारित किया गया उनकी प्रासंगिकता आज भी विद्यमान है।

इस प्रकार गोखले क्रमिक विकास के पक्षपाती थे। वे भारत में ब्रिटिश शासन के अनेक अनुभव प्राप्त करने के इच्छुक थे। वे भारत में सुधारों की प्रक्रिया तब तक अपूर्ण मानते थे। जब तक परिपक्वता नहीं आ जाती।

स्वराज्य प्राप्ति में उग्रवाद का स्वरूप

उदारवादी विचारकों ने ब्रिटिश शासन को या भारत ब्रिटेन संपर्क को दैवीय नियति में रखने के उपरान्त भी ब्रिटिश शासकों के द्वारा भारतीयों को जों भीषण आर्थिक निर्गम, भारतीयों को उच्च पदों से वंचित रखना प्रवासी भारतीयों के साथ जाति विभेद तथा दुर्व्यवहार इत्यादि। परिणामस्वरूप उदारवादी नीति के असंतोष स्वरूप कांग्रेस के अन्दर ही उग्रवादी राष्ट्रवादी विचारधारा का उद्घोष हुआ या जन्म हुआ जिसके प्रमुख अगुआ थे बाल गंगाधर तिलक, लाला लाजपतराय, विपिन चन्द्रपाल, अरविन्द घोष आदि। इन्होंने ब्रिटिश शासन को वरदान की जगह अभिशाप की संज्ञा दी।

तिलक उग्रवादी विचारधारा के अग्रज थे जिन्होंने स्वराज्य की आवयश्कता महत्ता एवं अर्थ को स्पष्ट किया। भारतीय परम्परा से अनुप्राणित तिलक के लिए स्वराज्य का अर्थथा ''धर्मराज्य'' स्व अर्थात प्रजा का उनकी सलाह सहयोग, सहमति से चलने वाला राज्य ही स्वराज्य है। स्वराज्य की व्याख्या करते हुए तिलक ने इस बात पर बल दिया कि सबसे प्रमुख बात यह है कि अपने मतानुसार हमें जो अपना हित प्रतीत हो उस नीति के अनुरूप राज्य व्यवस्था के संचालन में हमें पूर्ण अधिकारी होना चाहिए। वास्तविक स्वरूप यही है।

तिलक के अनुसार स्वराज्य की प्राप्ति के उद्देश्य में दो प्रमुख बाधाएँ थी। प्रथम संघर्ष ऐसे सशस्त्र और ससैन्य साम्राज्य से था जो विश्व में सबसे अधिक शक्तिशाली था। द्वितीय शिक्षित भारतीयों में हीनता की भावना और इस विश्वास का अभाव कि उनमें संगठन, ज्ञान और चरित्र के क्षेत्र में ब्रिटिश श्रेष्ठता को चुनौती देने की योग्यता है। इन बाधाओं को दूर करने के आवश्यक शासन शक्ति के विरूद्ध विशाल जनशक्ति को संगठित किया जाये और बौद्धिक वर्ग के आत्म सम्मान साहस एवं स्वामी भक्ति की भावना जाग्रत की जाये।

तिलक ने अनावश्यक हिंसा का समर्थन नहीं किया नहीं सरकारी कानूनों की आवश्यक रूप से अवज्ञा पर बल दिया। गाँधी के विपरीत तिलक का मत था कि सरकारी कानून स्वतंत्रता आन्दोलन में रूकावट पैदा नहीं करते तो उन्हें तोडने की आवयश्कता नहीं साथ ही तिलक ने निरपेक्ष अहिंसा का कमी समर्थन नहीं किया

तिलक क्रान्तिकारी अस्त्रों के प्रयोग की अनुमति नहीं देते किन्तु साथ ही यह भी सत्य है कि उन्होंने क्रान्तिकारी साधनों की कमी नैतिक आधार पर निदा भी नहीं की। गाँधी ने तिलक के साधनों के संबंध में कहा कि तिलक कार्य सिद्धि के लिए अनुचित साधनों के प्रयोग को भी गन्तव्य मानते थे। तिलक ने गाँधी को उत्तर दिया राजनीति संसारी व्यक्तियों का कार्य है साधुओं का नहीं। मैं बुद्ध के इस सिद्धांत को नहीं मानता कि क्रोध का उपाय केवल प्रेम है। मैं कृष्ण के उस उपदेश को स्वीकारता हूँ कि जो तुमसे जैसा वर्ताब करता है तुम उसके साथ वैसा ही वर्ताव करो। गीता में धर्मानुसार हिंसा की बात कही गई है किन्तु यह लोक संग्रह एवं अहंकार की भावना से शून्य होनी चाहिए। इसी आधार पर तिलक के ऊपर आक्षेप लगाया गया कि वे मुस्लिम विरोधी है। इसके उत्तर में तिलक ने कहा "शिवाजी ने अफजल खाँ की हत्या इसलिये नहीं की थी कि वे मुस्लिम थे बल्कि इसीलिये की थी कि राष्ट्रीय विकास में वो बाधक थे।

तिलक ने आत्म सम्मान और आत्मनिर्भरता के विकास हेतु जनता को सतत् रूप से शिक्षिता करने का समर्थन करते हुए जन अधिकारों एवं जैन सम्मान की रक्षा के लिए 1905 से 1909 तक अनेक आन्दोलन चलाये। इन आन्दोलन का उद्देश्य जनता को संगठित करना तथा सामूहिक कार्य की शिक्षा देना था। 1916 से पूर्व तिलक ने अन्य उग्रवादियों अरविन्द घोष, विपिन चन्द्रपाल के समान स्वराज्य का आदर्श ही राष्ट्र में गतिशीलता एवं ओजिस्वता का संचार कर सकता था। 1906 में तिलक के विचारों में परिवर्तन देखा गया। तिलक ने "होमरूल लीग" की स्थापना की। लीग ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत स्वराज्य चाहती थी। होमरूल लीग का प्रस्ताव था कि विधेयक प्रस्तुत किया जाये। इसका तात्पर्य यह नहीं था कि तिलक ने स्वराज्य की अपनी पूर्ण स्वाधीनता की पूर्व धारणा की आकांक्षा का परित्याग कर दिया गया। वरन् तत्कालीन परिस्थितियों को देखते हुए ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत स्वराज्य का व्यवहारिक सुझाव दिया। भारत चाहता है कि उसका शासन तंत्र उसके बढते हुए आत्म सम्मान तथा बौद्धिकता के अनुकूल हो। भारत चाहता है कि उसकी राज्य व्यवस्था ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत स्वायत्त शासन की हो। तिलक ने अहमदाबाद में भाषण में कहा हमारा लक्ष्य (स्वराज्य) सम्राट के शासन का उन्मूलन करना नहीं है। हमें मंदिरों के देवताओं को नहीं हटाना केवल पुजारियों को बदलना है। स्वराज्य प्राप्ति के लिए उदारवादियों द्वारा अपनाये जा रहे संवैधानिक साधनों से तिलक पूर्णतः असहमत थे। उन्होंने उदारवादियों के साधनों अनुनयः आग्रह और प्रतिरोध पर कटाक्ष करते हुए कहा तीन प्रार्थना, प्रसन्न करना और प्रतिरोध से कुछ नहीं होगा जब तक कि इनके पीछे ठोसशक्ति नहीं हो। आयरलैण्ड, जापान और रूस के उदाहरणों से हमें सबक लेना चाहिए।

तिलक गोखले की तरह साधनों की नैतिकता के प्रश्न को साध्य की तुलना में अधिक महत्वपूर्ण नहीं मानते थे किन्तु इसका अर्थ यह है कि तिलक का आग्रह साधनों की नैतिकता की उपेक्षा उनकी प्रभावशीलता के प्रति अधिक था। तिलक ने ब्रिटिश सत्ता के विरूद्ध राजनीतिक आन्दोलन के रूप में अपनाये जाने पर जिन साधनों पर बल दिया वो अग्रलिखित हैं –

- **स्वदेशी**
- **बहिष्कार**
- **राष्ट्रीय शिक्षाः** राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली और पाठ्यक्रम के प्रति उनके दृष्टिकोण को सारतः निम्न प्रकार से स्पष्ट किया जा सकता है –
  - शिक्षा माध्यम मातृभाषा हो
  - एक राष्ट्रभाषा तथा एकरूपता पर बल
  - तकनीकी शिक्षा पर बल
  - धार्मिक शिक्षा पर बल
  - राजनीतिक शिक्षा बल

- **निष्क्रिय प्रतिरोधः** स्पष्ट है कि तिलक के लिए राष्ट्रीय उत्कर्ष राष्ट्रीय विकास, स्वराज्य सर्वोपरि था। इसके लिए सभी प्रकार के साधनों के प्रयोग की स्वीकृति देते थे। तिलक ने 1903 में केसरी में लिखा। यदि संवैधानिक और कानूनगत साधन असफल साबित हों तो अन्य साधनों के बारे में सोचो। यदि तुम दमनात्मक शासन से उत्पीडित हो तो यह तुम्हारी भूल है यदि वे असहनीय हों जाये ंतो उठो और क्रान्ति करो।

स्वराज्य तिलक की जीवन दायिनी धुन थी। मृत्यु शैया पर पडे सन्निपात में बहुधा देश की दरिद्रता, कांग्रेस और स्वराज्य के संबंध में बोलते रहते थे। उनके अंतिम शब्द थे–''यदि स्वराज्य न मिला तो भारत समृद्ध नहीं हो सकता। स्वराज्य हमारे अस्तित्व के लिए अनिवार्य है। 1920 में कांग्रेस डेमोक्रेटिक दल की स्थापना उन्होंने इसी उद्देश्य से की थी। इस दल के घोषणा पत्र में केन्द्रीय सकरार और प्रान्तीय शासन में सुधारों के लिए विस्तृत योजना प्रस्तुत की गई थी। ऐसी शासन व्यवस्था सभी प्रकार के दमनकारी कानूनों एवं स्वेच्छाचारिता से युक्त हो जिसमें श्रमिकों के कल्याण का पूरा ध्यान रखा जाये। स्वदेशी उद्योगों को प्रोत्साहन दिया जाये कि चारित्रिक दृढता पर निर्भर करता है जो उनमें शौर्य एवं बलिदान की क्षमता उत्पन्न करते हैं। तिलक ने इस तथ्य पर बल दिया कि भारत के पास उपनिषदों एवं अन्य ग्रन्थों एवं अन्य ग्रन्थों में विद्यमान जो जीवन दर्शन है। वही हमारे राष्ट्र का मेरूदण्ड है, हमारी पहचान है, अस्मिता है। हमारी विशिष्ट राष्ट्रीय प्रतिभा है। उसके अनुसार आचरण ही राष्ट्र के पुनरूद्धार की आधारशिला बन सकता है। भारत के अपने विशिष्ट संस्कार हैं और हमारी संस्कृति हर दृष्टि से श्रेष्ठतर हैं। भारत के राष्ट्रीय स्वराज्य के प्रति अडिंग आस्था ने ही उन्हें उद्धत साम्राज्यवाद का सामना करने हेतु प्रेरित किया।

स्वराज्य के लिए तिलक के विचारों एवं कार्यों की दृढता, अभयवृत्ति, आत्मकुशासन एवं आत्मनियंत्रण की विशिष्टता को गाँधी, नेहरू एवं अन्य स्वतंत्रता सेनानियों ने भी ग्रहण किया और तिलक को भारतीय क्रान्ति की जनक की संज्ञा दी। तिलक ने विचारों की महत्ता इस तथ्य से परिलक्षित है कि भारत में स्वराज्य आन्दोलन पर किसी भी समकालीन विचारक की तुलना में सर्वाधिक गहन एवं दीर्घकालीन प्रभाव तिलक का ही रहा।

साध्य व साधन के संबंध में तिलक का मत था कि राजनीति में सब कुछ वांछनीय है। दृष्ट का प्रतिकार पहले साधुता से हो सकता हो तो पहले साधुता से करें। दार्शनिक रूप में उन्होंनें संकल्पों की शुद्धता को सर्वाधिक महत्व दिया किन्तु यह भी मत था कि स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए किसी एक साधन तक सीमित रहना बुद्धिमता नहीं है। एक बार उन्होंने कहा था कि भीख माँगने से लेकर खुले विद्रोह तक जो भी उपाय तुम्हें अपनी अपनी समर्थ अनुरूप जान पडे उसे चुन लो किन्तु याद रखें स्वधर्म सर्वोपरि है। होमरूल आन्दोलन के समय तिलक प्रायः कहा करते थे मैं ब्रिटिश सम्राट के विरूद्ध नहीं हूँ मैं तो केवल आंग्ल भारतीय नौकरशाही को बदलना चाहता हूँ। उन्होंने स्पष्ट लिखा ''स्वराज्य हमारी समृद्धि की नींव है न कि उसका शिखर।'' मई 1916 में अहमदाबाद में स्वराज्य पर अपने भाषण में उन्होंने कहा ''सम्राट अपनी गोरी–काली प्रजा के बीच भेदभाव नहीं करते इसलिये नौकरशही पुजारियों को बदलने में उनका अहित नहीं होगा। स्वराजय का अर्थ यही नहीं है कि अंग्रेजी सरकार के स्थान पर जर्मन सरकार को स्थापित किया जाये। स्वराज्य से अभिप्राया केवल यह है कि भारत के आंतरिक मामलों का संचालन और प्रबंध भारतवासियों के हाथों में हो। हम ब्रिटेन के राजा के बनाये रचाने में विश्वास करते हैं।

तिलक होमरूल की धारणा में जिस प्रकार उत्तरदायी सरकार की परिकल्पना की उससे स्पष्ट है कि वे लोकतांत्रिक स्वराज्य चाहते थे। तिलक जीवनी की प्रख्यात लेखक टी.बी पार्वते ने लिखा है कि तिलक के संदर्भ में भारतीय क्रान्ति के जन्मदाता आधुनिक भारत के निर्माता आदि अनेक संज्ञाओं का उल्लेख किया गया है जिसमें लोकतात्रिक स्वराज्य के प्रतिपादक अवश्य ही जुड जाना चाहिए क्योंकि जीवन पर्यन्त उन्होंने जो प्रचार किया उसमें वे इस बात पर निरन्तर बल देते रहे थे उनके लिए लोकतंत्र और स्वतंत्रता समान उद्देश्य थे। तिलक स्वराज्य में स्व का अर्थ लोकतंत्र से लगाते हैं। विदेशी प्रभुत्व के विरूद्ध तिलक का मुख्य तर्क यह था कि वह व्यक्ति के विकास को अवरूद्ध कर उसे जीवन के किसी भी क्षेत्र में विशिष्टता प्राप्त करने से वंचित कर

देता है। स्वराज्य का उद्देश्य इसी बाधा का निवारण करना है उनके अनुसार लोंगों को तब तक चैन नहीं लेना चाहिए जब तक उन्हें निर्णय प्रक्रियन के भाग लेने एवं उसे प्रभावित करने का अवसर नहीं मिले।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. रानाडे अपने निबंध, इण्डियन, फोरेन इनिग्रेशन 1893 में यह विचार व्यक्त किये पृ. 174 पृ.
2. वर्मा वी.पी. पूर्वाक्त पृ. 191–92 पृ.
3. रानाडे : एसेज इन इण्डियन इकोनोमिक्स 103–4
4. पार्वते, टी.वी. गोपाल कृष्ण गोखले, अहमदाबाद, नवजीवन 1985 पृ. 457
5. स्पीचेंज एण्ड राइटिंग ऑफ तिलक, मद्रास नटेशन 1922 पृ. 256
6. राजपुरोहित, के.एल. : आध्यात्मिक राष्ट्रवाद जोधपुर, साइन्टिपिक पब्लिशर्स 1991 पृ. 255
7. स्पीचेंज एण्ड राइटिंग ऑफ तिलक, मद्रास नटेशन पृ. 25
8. धनंजय कीर, पूर्वोक्त 138 पृ. 220
9. रामगोपाल वर्मा : लोकमान्य तिलक, बम्बई एशिया, 1956
10. केसरी, 20 अप्रैल 1920
11. द कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गाँधी, खण्ड 45, न्यू देहली पब्लिकेशन डिविजन 1971 पृ. 167

❑❑❑